प्रधान मंत्री तथा वैदेशिक-कार्य मंत्री (श्री जवाहरलाल नेहरू) : जो स्थिति आज हमारे समक्ष है, यदि उस के सम्बन्ध में मैं कुछ विस्तार से कहूं तो संभवतः लाभदायक होगा, यद्यपि हमारे पास अनुदानों की मांगों से सम्बन्धित विषय हैं और निःसंदेह ऐसे विभिन्न कटौती प्रस्तावों से सम्बन्धित हैं जिन में से कुछ अपने अपने क्षेत्रों में महत्वपूर्ण हैं। सामान्यतः वैदेशिक कार्य का सारा ही मंत्रालय हमारे अन्तर्राष्ट्रीय सम्पर्कों के लिये उत्तरदायी है और आजकल संभवतः अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्धों का विश्व में बहुत अधिक महत्व है और अन्य किसी बात की अपेक्षा आन्तरिक नीति पर भी इस का बहुत प्रभाव पड़ता है।

हम ऐसे युग में रह रहे हैं जहां हमें प्रतिदिन यह भय रहता है कि संभवतः कोई ऐसी बात हो जाय जिस से युद्ध या शान्ति की गंभीर परिस्थिति पैदा हो जाय। यह सच है कि मैं युद्ध का कोई तुरन्त खतरा या निकट भविष्य में कोई खतरा नहीं देखता, तब भी मुझे यह कहते हुए खेद होता है कि सामान्यतः विश्व की परिस्थिति कठोर हो गई है और उस का हल कठिन हो गया है और ऐसी घटनायें घट रही हैं जिस से न केवल परिस्थिति के बिगड़ने का भय है वरन् भयावह संकट पैदा हो जाने का भी खतरा है। संभवतः जब भविष्य में इस काल का इतिहास लिखा जायेगा तो दो बातें महत्वपूर्ण समझी जायेंगी—अर्थात् अणु शक्ति का आविष्कार और दूसरे एशिया का स्वतंत्र होना। निस्सन्देह और भी बहुत सी महत्वपूर्ण बातें हो रही हैं परन्तु मैं समझता हूं कि ये दो बातें ऐतिहासिक दृष्टि से अत्यधिक महत्वपूर्ण हैं और अन्य किसी भी बात की तुलना में अधिक महत्व की हैं। बाद की बात, अर्थात् एशिया की स्वतंत्रता के प्रतीक-स्वरूप, जैसा कि सभा को भली प्रकार विदित है, इंडोनेशिया के बांडुंग नामक स्थान पर लगभग ढाई सप्ताह में एक सम्मेलन हो रहा है जिस का नाम एशिया-अफ्रीका सम्मेलन है जिस में एशिया और अफ्रीका के सभी स्वतंत्र राष्ट्रों को आमंत्रित किया गया है। मेरा विश्वास है कि यह सम्मेलन ऐतिहासिक महत्व का है। निस्सन्देह यह अभूतपूर्व सम्मेलन है जोकि पहले कभी नहीं हुआ और यह तथ्य कि १४०० करोड़ व्यक्तियों के प्रतिनिधियों का सम्मेलन हो रहा है, चाहे उन का पारस्परिक मतभेद हो, एक अत्यन्त महत्व की बात है।

सभा को भली प्रकार याद होगा कि पहले यह नियमित प्रथा थी कि एशिया के कार्यों सम्बन्धी निर्णय यूरोप के कतिपय बड़े राष्ट्र अथवा अमरीका किया करते थे और इस बात को कोई महत्व नहीं दिया जाता था कि उन विषयों के सम्बन्ध में एशिया के लोगों के भी कुछ विचार होंगे। यह सच है कि अब उन विचारों को कुछ महत्व दिया जाता है क्योंकि वे उन की उपेक्षा नहीं कर सकते। तो भी एशिया से बाहर के देशों का यह उच्च विशेषाधिकार ही प्रतीत होता है कि वे एशिया का भार अपने कन्धों पर वहन करते हैं और बार बार ऐसी बातें होती हैं और ऐसे निर्णय किये जाते हैं जिन का एशिया पर प्रभाव पड़ता है और एशियन की कोई राय नहीं ली जाती। परन्तु यह स्पष्ट है कि एशिया की स्थिति बदल चुकी है, वह परिवर्तन अच्छा हुआ है या बुरा, यह तो लोगों की राय पर निर्भर करता है, परन्तु परिवर्तन हुआ है और बहुत हुआ है और एशिया के देश यह पसन्द नहीं करते कि अन्य लोग एशिया के देशों का भाग्य-निर्णय करें। मैं अनुमान से दूसरे लोगों के सम्बन्ध में नहीं कह सकता परन्तु मैं समझता हूं कि मैं जो यह कह रहा हूं, वह ठीक ही है। अतः यह

[श्री जवाहरलाल नेहरू]

एशिया-अफ्रीका सम्मेलन बहुत महत्वपूर्ण है। इस सम्मेलन मे क्या होगा, इस सम्बन्ध में मैं कुछ नहीं कह सकता क्योंकि जो देश वहां आ रहे हैं उन की नीतियां भिन्न हैं, दृष्टिकोण भिन्न हैं, कुछ विरुद्ध नीतियां भी हैं और मैं जानता हूं कि उन के लिये कुछ सामूहिक दृष्टिकोण या विचारधारा बनाना संभव नहीं होगा। फिर भी यह बात स्पष्ट है कि भले ही उन में विरोध हो उन में कुछ सामान्य बातें हैं, नहीं तो वे इस प्रकार सम्मेलन बुलाने के लिये सहमत ही न होते।

अतएव मुझे आशा है कि सभा इस बात को याद रखेगी कि यह जो सम्मेलन हो रहा है, काफ़ी महत्वपूर्ण है। यह सम्मेलन किसी के विरुद्ध नहीं है, यह यूरोप या अमरीका के विरुद्ध नहीं है और विश्व में जो बड़ा संघर्ष हो रहा है और खींचातानी चल रही है, उस में सम्मेलन किसी का पक्ष नहीं लेगा। यह तो केवल एशिया और अफ्रीका के देश परस्पर मिल रहे हैं। तब अफ्रीका और एशिया के देशों का उद्देश्य क्या है? स्पष्टतः उन सब के उद्देश्य दो हैं, शान्ति-स्थापन और प्रगति करने का अवसर प्राप्त करना। वे सभी इस के लिये उत्सुक हैं। उन्हें अन्य लोगों के झगड़ों और विवादों में कोई अभिरुचि नहीं है। वे जीवित रहना चाहते हैं। वे अपने अपने देशों में अपना परिष्कार करना चाहते हैं जैसे हम अपने देश में परिष्कार के इच्छुक हैं। और इस प्रयोजन के लिये हमें विश्व में शान्ति की आवश्यकता है। अतएव मैं समझता हूं कि शान्ति के लिये जो अत्यधिक प्रेरणा विश्व भर में विद्यमान है वह अन्य सभी देशों की अपेक्षा एशिया और अफ्रीका के देशों में इसी प्रकार अधिक है जैसे कि विश्व भर में स्वतंत्रता की प्रेरणा विद्यमान है, परन्तु उन देशों में वह प्रेरणा अन्य देशों की अपेक्षा अधिक है जिन्हें बहुत समय से स्वतंत्रता नहीं मिली थी और जिन्हें या तो हाल ही में स्वतंत्रता मिली है और या जिन्हों वे अभी स्वतंत्रता प्राप्त करनी है। इन के लिये उन देशों की अपेक्षा स्वतंत्रता का मूल्य अधिक है जिन्हें बहुत समय से स्वतंत्रता प्राप्त है। अतएव उन देशों में यह शान्ति और प्रगति का अवसर प्राप्त करने की उत्कट आकांक्षा है और यह पारस्परिक सम्बन्ध का साधन है।

जैसा मैं ने बताया, मैं आशा करता हूं कि यह सम्मेलन बड़े राष्ट्रों की गुटबन्दी में हिस्सा नहीं लेगा। परिस्थितियों के अनुसार ऐसा हो भी नहीं सकता क्योंकि जो देश इस सम्मेलन में आ रहे हैं, उन के इस विषय के सम्बन्ध में विरुद्ध विचार हैं। सभा को पता है कि किसी विषय पर तर्क अथवा औचित्य के आधार पर विचार करना प्रायः सम्भव नहीं हुआ। हमें वह बताया जाता है कि अब प्रत्येक विषय पर इस दृष्टि से विचार किया जाता है कि इस से साम्यवादी उद्देश्य की पूर्ति होती है अथवा उस का विरोध होता है—वह साम्यवादी है अथवा साम्यवाद-विरोधी है। जब तक आप साम्यवादी या साम्यवाद-विरोधी संघर्ष की बात न उठायें तब तक कुछ राष्ट्र या प्राधिकारी किसी परिस्थिति को किसी प्रकार हल नहीं कर सकते। इस से किसी प्रश्न को हल करने की बात जाने दीजिये उस प्रश्न को समझना भी कठिन हो गया है। विश्व का यह सीधा वरन् साधारण दृष्टिकोण है कि किसी-न-किसी गुट का सदस्य होना आवश्यक है। और आप सदस्य नहीं हैं तो या तो आप बहुत मूर्ख हैं या आप यह बात नहीं समझते कि विश्व में क्या हो रहा है, या आप की प्रवृत्ति में कोई शरारत भरी है। समस्याओं

का इस ढंग से हल करना किसी भी समय कठिन होता परन्तु जब हम आज की तरह अणुशक्ति के युग को आरम्भ कर रहे हैं तो इस प्रकार का दृष्टिकोण प्रायः खतरनाक ही है और केवल इस दृष्टिकोण के कारण संभवतः यह विश्व को अकस्मात ही तबाही की ओर ले जायेगा ।

हम ने प्रयत्न किया है कि हम इन बड़े राष्ट्रों के गुट में न आयें और मैं उन सब के प्रति सम्मान रखता हूं । मैं उन्हें यह नहीं कहना चाहता कि क्या ठीक है और क्या गलत है ; परन्तु मैं यह अवश्य स्वीकार करता हूं कि मैं अन्य देशों के सम्बन्ध में—कभी कभी अपने के सम्बन्ध में भी—अपनी राय बताते हुए मुझे संकोच होता है क्योंकि जो समस्यायें हमारे समक्ष हैं वे बहुत कठिन हैं । नई समस्यायें पैदा की जा रही हैं और यदि लोग कुछ नारे अथवा अपने समय के दृष्टान्त द्वारा कोई हल ढूंढना चाहें तो मुझे भय है कि यह सर्वथा गलती होगी । अतः इन विषयों के सम्बन्ध में कहते हुए मुझे बहुत संकोच होता है । मैं यह नहीं समझ सकता कि आज के बड़े राष्ट्र किस प्रकार से आज की समस्याओं को हल कर रहे हैं ।

गत वर्ष जेनेवा में जिस ढंग से समस्या को हल करने का प्रयत्न किया गया, वह तर्कसंगत ढंग था । यह ढंग वस्तुतः समस्या के हल के लिये था । इस से कम-से-कम अस्थायी हल निकल आया था क्योंकि जो लोग सम्मेलन में आये थे वे कुछ निष्कर्ष निकालना चाहते थे और चूंकि इस समस्या पर इसी प्रकार से विचार किया गया था और वह केवल साम्यवादी और साम्यवाद-विरोधी देशों के बीच होने वाले संघर्ष की छींटाकसी के रूप में नहीं थी । इसलिये इस का हल निकल आया था । जेनेवा में एक सफलता प्राप्त करने के पश्चात् विश्व के देश पुनः एक दूसरे की ओर दूर से घूरने लगे हैं और मुझे यह बहुत असाधारण बात लगती है, कि वे पुनः दक्षिण-पूर्व एशिया, पश्चिम एशिया और जहां-तहां शान्ति और सुरक्षा के नाम पर सैनिक संधियों और समझौतों पर ज़ोर दे रहे हैं ।

अब इस प्रश्न पर सिद्धान्ततः तर्क किया जा सकता है कि क्या इन संधियों से शान्ति और सुरक्षा की व्यवस्था हो सकती है अथवा नहीं ; परन्तु हमें इस के सिद्धान्त को नहीं लेना चाहिये क्योंकि वास्तविक तथ्य हमारी आंखों के समक्ष है और हम जानते हैं कि क्या हो रहा है । जेनेवा सम्मेलन के पश्चात् हिन्दचीनी राज्यों में एक ऐसी परिस्थिति पैदा हो गई थी जो भले ही कठिन थी परन्तु उस में आशा की झलक दिखाई देती थी । कुछ मास तक वह समस्या रही और उस के आयोगों के सभापतित्व का श्रेय भारत को प्राप्त हुआ जिसने सन्तोषजनक रूप से तथा शान्तिपूर्वक कार्य किया था । फिर एक प्रकार के सैनिक समझौते द्वारा दक्षिण-पूर्व एशिया में सुरक्षा और शान्ति की प्राप्ति के लिये एक तथाकथित प्रयत्न किया गया जिस की नींव मनीला में रखी गई थी । उस समय मैं नहीं समझ सका था कि उस समझौते से किस प्रकार शान्ति और सुरक्षा प्राप्त हो सकती है । अब मुझे स्पष्ट रूप से पता लगा है कि मनीला संधि और उस के पश्चात् होने वाले बेंकाक सम्मेलन से उस क्षेत्र में जो पहले शान्ति की भावना विद्यमान थी और जेनेवा सम्मेलन में जो सह-अस्तित्व का भाव निहित था वह सब आमूलतः नष्ट हो गया है । हिंदचीनी के राज्य यदि एक दूसरे को मान्यता न देते और यदि अन्य बड़े राष्ट्र उन की स्वतंत्र सत्ता को स्वीकार न करते और इस प्रकार का समझौता न कर लेते कि वे उन की स्वतंत्र

[श्री जवाहरलाल नेहरू]

सत्ता में कोई बाधा नहीं डालेंगे तो उन राज्यों का अस्तित्व न रहता । इसी आधार पर जेनेवा सम्मेलन बुलाया गया था । आज के विश्व में कठिनाई क्या है ? संभवत: किसी देश के आक्रमणकारी उद्देश्य का डर नहीं है, यद्यपि कतिपय देशों की ऐसी इच्छा हो सकती है, परन्तु प्रत्येक देश को वह भय है कि दूसरा देश उस पर आक्रमण करना चाहता है । और दूसरे को आक्रमण से रोकने के पश्चात् आप स्वयं आक्रमणकारी बन जाते हैं। यह सर्वथा असाधारण स्थिति है और हिन्द-चीनी के राज्यों की यही स्थिति थी क्योंकि बड़े देशों में से प्रत्येक को यह भय था कि अन्य देश उस के विरुद्ध हिदचीनी से लाभ न उठायें । और उस का केवल एक सुझाव यही था कि वे दोनों राष्ट्र हिन्दचीनी के राज्यों को उन के हाल पर अकेला छोड़ दें और किसी भी प्रकार उन को अपने गुट में लाने का प्रयत्न न करें क्योंकि ज्योंही एक गुट ने अपना प्रभाव या अपना दबाव बढ़ाना चाहा या वह उन क्षेत्रों को अपने प्रभाव क्षेत्र में ले आया, जैसाकि उसे पहले 'प्रभाव का क्षेत्र' जैसे कोमल शब्द द्वारा अभिहित किया जाता था, तो तुरन्त ही दूसरा राष्ट्र वहां पर आ धमकता था और पुन: संघर्ष आरम्भ हो जाता था जिसे आप शीत-युद्ध या किसी भी नाम से पुकार सकते हैं ।

दुर्भाग्यवश, वह सुखद स्थिति हिन्दचीनी में अधिक दिन नहीं रही। मैं यह नहीं कहता कि वह पूर्णत: नष्ट हो गई है परन्तु आज परिस्थिति अधिक कठोर है । उस से सर्वथा भिन्न एक आश्चर्य चकित करने वाली स्थिति की बात, संभा आज प्रात: के समाचारपत्रों में देख सकती है जिस में कहा गया है कि दक्षिण वियतनाम में गृह-युद्ध आरम्भ हो गया है । जेनेवा करार की कई प्रकार से व्याख्या की जाती है, और मैं यह कहूंगा कि जेनेवा करार का प्रारम्भ इतनी जल्दी में तैयार किया गया था कि उस की कई व्याख्यायें हो सकती हैं । अत: मैं केवल लाओस के सम्बन्ध में जेनेवा करार की बात कह रहा हूं और सारे करार को नहीं ले रहा । कठिनाइयां पैदा हो रही हैं । मैं इन विषयों को विस्तारपूर्वक नहीं लेना चाहता, परन्तु मैं केवल यह बता रहा हूं कि ऐसी कठिनाइयां पैदा होती हैं । मैं नहीं कहना चाहता कि उस में दोष किस का है परन्तु इन कठिनाइयों को हल करने के लिये हमारे कतिपय उत्तरदायित्व हैं । यह बताने से कि कौन लोग दोषी हैं, कठिनाई के हल करने में सहायता नहीं मिलती । सभा को यह बात ध्यान में रखनी चाहिये कि दूर पूर्व और दक्षिण पूर्व एशिया में कतिपय घटनाओं के कारण सारा वातावरण बदल चुका है—अर्थात् युद्ध का खतरा और एक व्यक्ति का दूसरे का शोषण करने का और एक देश का दूसरे पर आघात करने का खतरा बढ़ गया है । मैं ने मनीला संधि और उस के बाद के बैंकाक सम्मेलन का उल्लेख किया था । चीन में चीन देश और फारमोसा के बीच की स्थिति भी बहुत खतरनाक है । मैं उस बात को बार बार दोहराना नहीं चाहता परन्तु कुछ ऐसी बात है कि अन्य कुछ देश हम से सहमत नहीं । निस्सन्देह कोई कह सकता है कि फारमोसा एक प्रकार का पृथक् राज्य है क्योंकि वह चीन का ही अंग होने का दावा करता है जिस प्रकार कि चीन यह दावा करता है कि फारमोसा उस का एक अंग है । परन्तु एक स्पष्ट तथ्य के सम्बन्ध में प्राय: सभी सहमत हैं और वह तथ्य यह है कि मात्सू और क्यूमाय द्वीप जो इस देश से चार-पांच मील की दूरी पर हैं निश्चय ही इसी देश के अंग हैं, अत: शत्रुओं की सेना के वहां रहने से निरन्तर

खतरा रहेगा और तनातनी पैदा होगी । चीन की जनवादी सरकार के प्रति मैत्री न रखने वाले देशों ने भी अब अन्त में यह मान लिया है फिर भी मात्सू और क्यूमाय द्वीपों पर दूसरी सेनाओं का कब्जा चल रहा है और यह कहा जाता है कि यदि चीन की जनवादी सरकार ने उन पर आक्रमण किया, तो वह महान् शक्ति अपनी पूरी ताक़त उन की रक्षा करने में लगा देगी, क्योंकि उन में उस महान् शक्ति की सुरक्षा अन्तर्निहित है । मैं सविनय कहूंगा कि यह अजीब बात है । यदि आप बड़ी बड़ी लड़ाइयां न चाहें, तो यह निश्चित है कि प्रत्येक तर्क के आधार पर ये द्वीप चीन देश को मिलेंगे और युद्ध का परिणाम कोई नहीं जानता । तो क्या आप युद्ध का आयोजन चाहते हैं, आप लोग जो कुछ भी कर रहे हैं, वह तर्क और व्यावहारिक ज्ञान के सर्वथा विपरीत है । यह मेरी समझ में नहीं आता, क्योंकि ये बातें ऐसे पैमाने से नापी जाती हैं, जिसे मैं नहीं मानता । विदेशी प्रेस में मैं अपने प्रति निकले लेख पढ़ता हूं "अब वह इधर झुक रहे हैं, अब उधर, आदि" । कोई भी यह नहीं सोचता कि मैं एक भारतीय हूं और भारत के प्रति ही झुका हूं किसी और के प्रति नहीं—मानो मैं अमरीका, रूस या चीन की ओर झुका हुआ होऊं । मैं उन से मैत्री चाहता हूं । मैं उन की ओर झुकूं क्यों ? मैं जैसा हूं खुश हूं और अपने देश और देशवासियों के लिये काम करना चाहता हूं । पर मैं विश्व शान्ति इसलिये चाहता हूं, क्योंकि वह मेरे देश के लिये और सभी देशों के समान बहुत ही महत्वपूर्ण है । सारी दुनिया लड़ाई में कूद पड़े, हम उस के चक्कर में न पड़ेंगे । इस में कोई भी सन्देह नहीं है कि हम कभी भी युद्ध न करेंगे । पर यदि सारी दुनिया में युद्ध छिड़ता है, तो हम उस के प्रतिफलों से बच नहीं सकते और हम दुनिया को नष्ट होता हुआ देख भी नहीं सकते । इस से हम पर प्रभाव पड़ेगा । माननीय सदस्यों को प्रो० आइन्सटाइन की यह बात याद होगी कि आगामी युद्ध के बाद जो युद्ध होंगे वे धनुष-बाण से लड़े जायेंगे । अर्थात् अगले युद्ध के प्रतिफल ऐसे होंगे कि केवल धनुष-बाण बचेंगे और सभ्यता की धनुष-बाण वाली स्थिति होगी । यह एक बहुत बड़े वैज्ञानिक का और उन लोगों का विचार है, जो आधुनिक अस्त्रों के बारे में सोचते हैं ।

अतः हमें परिस्थिति का यथार्थ पहलू देखना चाहिये और शान्ति की अस्पष्ट बात मात्र करते हुए प्रत्येक काम ऐसा नहीं करना चाहिये, जिस से भय और युद्ध का वातावरण पैदा हो । यह अजीब बात है और मुझे इस में कोई सन्देह नहीं कि कुछ पागलों को छोड़ कर दुनिया में कोई भी युद्ध नहीं चाहता, फिर भी हम अनिवार्य रूप से काम वही करते हैं, जो दुनिया को युद्ध की ओर ले जाते हैं । आप कह सकते हैं कि दोष इस देश या इस राजनीतिज्ञ का है, पर इस से विशेष लाभ नहीं होगा । शायद हम सभी कुछ सीमा तक दोषी हैं । मैं ने दक्षिण-पूर्वी एशिया का नाम लिया था । अब मध्यपूर्व को लें । छोटी-मोटी सैनिक सन्धियों और गठबन्धनों के लिये एक भावावेश चल रहा है । सब प्रकार के लोग जाते हैं, मिलते हैं और फिर वक्तव्य निकलते हैं कि इस देश और उस देश के बीच सैनिक सन्धि हो रही है । उस सैन्य सन्धि से विश्व या उस क्षेत्र की राजनीतिक या सैनिक स्थिति में क्या अन्तर पड़ जाता है—यह मैं आज तक न समझ सका । यदि इस से कुछ अन्तर पड़ जाता हो, तो मैं अपनी ग़लती सुधार लूंगा, क्योंकि इस से परिवर्तन पड़ता है और बुरा परिवर्तन ही पड़ता है ।

मुझे आज अन्य देशों की आलोचना करते हुए बहुत खेद है, क्योंकि वह जो चाहें करने के लिये स्वतंत्र है । पर मध्यपूर्व की संधियों को लें । कुछ मास पहले मध्यपूर्व

[श्री जवाहरलाल नेहरू]

या पश्चिमी एशिया के दो देशों के बीच सैन्य सन्धि की बात थी । वे ऐसा करें, यह स्वागत योग्य है । मैं उस समय मिश्र हो कर आ रहा था और २-३ दिन काहिरा ठहरा और प्रेस वालों ने इस बारे में मेरी प्रतिक्रिया पूछी । मैं ने स्पष्ट और व्यक्त रूप में बता दिया कि मेरे विचार से ये सैन्य सन्धियां लाभ न कर के हानि ही करेंगी । सुरक्षा या शान्ति के आश्वासन के स्थान पर वे उलटा ही काम करेंगी । इस मध्य-पूर्व समझौते का ही प्रभाव देखें । आज सवेरे के एक समाचार पत्र में इस का उल्लेख है कि एक बड़ी शक्ति इस से संलग्न है । पहला प्रतिफल यह हुआ कि अरब लीग कमज़ोर हो गई और उस में फूट पड़ गई । इस अरब लीग ने अरब देशों को सहयोगात्मक कार्य के लिये एकत्र किया था । दूसरा फल यह हुआ कि अब भारी फूट चल रही है । मिश्र इस के बहुत विरुद्ध है । सीरिया में बहुत कुछ इसी के कारण उस समय सरकार भी बदल गई और आज वह इन सन्धियों के बहुत विरोध में है । साउदी अरब इस का विरोध करता है । येमन भी है और भी बहुत से देश हैं, जो इस के विरोध में हैं अर्थात् इस सन्धि के होने के कारण मध्यपूर्व कई शत्रु गुटों में बंट गया है ।

इस सन्धि को जन्म देने वालों को ही लें । क्या इस में उन का भी हित है—दूसरों के हित की बात तो छोड़ दें —कि मध्य पूर्व की एकरूपता को तोड़कर वहां परस्पर वैमनस्य बढ़ जाये ? यूगोस्लाव सरकार के बारे में भी बताया जाता है कि वह मध्य-पूर्व की स्थिति में होने वाले विकासों से चिन्तित है, क्योंकि सीरिया और अन्य के ऊपर शामिल होने के लिये दबाव डाला जा रहा है और ये सरकारें उस का विरोध करती आई हैं और मुझे आशा है आगे भी करती रहेंगी क्योंकि अब बहुत अधिक काम दबाव और जोर डाल कर तथा धमकियां दे कर कराये जाने लगे हैं ।

अतः दक्षिण-पूर्व एशिया, सुदूरपूर्व और पश्चिमी एशिया में होने वाली बातों की दृष्टि में सदस्यगण देखेंगे कि चित्र कुछ उज्ज्वल नहीं है । यह फूट और संघर्ष और चारों ओर की खींचतान का दृश्य है । एक ओर हम जागते हुए, उठते हुए और हाथ पैर फैलाते हुए एशिया को देखते हैं । उसे अपना रूप प्राप्त करने में कुछ समय लग सकता है । और दूसरी ओर एशिया की सहायता करने के नाम पर, एशिया में शान्ति रखने के नाम पर फूट और लड़ाइयां बढ़ाने के प्रयत्न चल रहे हैं । स्पष्ट ही हमें इस से विशेष सन्तोष नहीं हो सकता ।

वास्तव में एक-दो को छोड़ विश्व की कई महत्वपूर्ण समस्यायें आज एशिया को प्रभावित कर रही हैं । जर्मनी की एक बड़ी समस्या हम पर प्रभाव नहीं डालती । मैं जर्मनी के बारे में बहुत कुछ नहीं कह सकता । सभा को केवल यह याद दिला सकता हूं कि यह बड़ी-से-बड़ी समस्याओं में से एक है । जर्मनी में जो कुछ होता है, उस में दोनों जर्मनियों का एक होना ही नहीं, जर्मनी के पुनःशस्त्रीकरण का प्रश्न भी अन्तर्ग्रस्त है । अब जर्मनी के पुनः शस्त्रीकरण का निर्णय किया गया है । इस समय कहीं पर एक निःशस्त्रीकरण सम्मेलन चल रहा है और वह कुछ प्रस्तावों पर विचार कर रहा है ; मुझे आशा है कभी प्रभावी होंगे । मैं नहीं जानता कि इस का क्या फल होगा । साथ ही बड़ी-बड़ी नीतियां कुछ ऐसी शक्तियों के पुनःशस्त्रीकरण पर भी आधारित हैं, जो इस समय भारी तरह से सशस्त्र नहीं हैं । यह बहुत तर्कसंगत नहीं लगता है ।

तो हमारा ठीक ठीक लक्ष्य क्या है । हमें बड़े चार और बड़े पांच की बात उन

की बातचीत बैठकों की चर्चा बार-बार सुनने को मिलती है—मैं नहीं जानता कि कितने बड़े हैं कितने छोटे। कभी कहा जाता है कि कार्यक्रम के बिना एक अनौपचारिक बैठक होगी। पिछले ढाई वर्ष से हम यह सुनते चले आ रहे हैं। फिर भी उन की बैठक में अविभाज्य कठिनाइयां आती हैं। यदि एक व्यक्ति सहमत हो जाता है, तो उसे दूसरा रोक लेता है और यदि दो सहमत हो जाते हैं, तो तीसरा सहमत नहीं होता। अतः स्थिति बिगड़ती जाती है और लोग एक दूसरे के सामने आ कर बात करने का साहस नहीं जुटा पाते। क्योंकि वे चाहते हैं कि बातचीत से पहले ही स्थिति पैदा हो जाये, जो उन के शब्दों में शक्ति की स्थिति हो—"हमें शक्ति के द्वारा बातचीत चलाने दो" यह सूत्र है। पर वे यह भूल जाते हैं कि दूसरा पक्ष भी शक्तिशाली बन रहा है। अतः जब तक आप सशक्त हुए होंगे, तब तक शायद अन्य देश या राष्ट्र अपेक्षतया अधिक सशक्त हुआ हो। अतः वे अपनी सही स्थिति नहीं समझ पाते।

अणु बमों और हाइड्रोजन बमों की बात करते समय कुछ अधिक या कम शक्ति का प्रश्न नहीं उठता। इस का अर्थ कुछ वहीं है, क्योंकि अब स्थिति यह है कि एक शक्ति यह करती है और दूसरी शक्ति अपेक्षतया दुर्बल भी हो तब भी दोनों पर प्रायः वहीं असर पड़ता है। अणु बमों और हाइड्रोजन बमों के बारे में इसे चरम् बिन्दु की स्थिति कहा जाता है। अतः एक दूसरे से बहुत बड़ा भी हो और उस के पास बहुत से बम, बहुत शक्तिशाली भी हों, अन्त में दोनों को भयानक हानि उठानी पड़ेगी। वास्तव में घाटा दुनिया को होगा। इसी से मैं ने बताया कि दुनिया की स्थिति आशाजनक नहीं अपितु निराशाजनक है। मैं नहीं कहता कि अचानक कोई विपत्ति आ रही है क्योंकि देश इस से भयभीत हैं कि वे इसे टालना चाहते हैं। फिर भी ये बातें उस दिशा में ही रही हैं और बड़े-बड़े राजनीतिज्ञ कभी कभी बहुत हलके रूप में कहने लगते हैं कि यदि ऐसा हुआ तो वे क्या करेंगे, किस प्रकार अपने सभी अणु-बमों की ताकत को लगा देंगे।

दुनिया की इस विस्तृत परिस्थिति में हमें क्या करना है? क्या हम भी इन बातों, शक्ति-संघर्षों और इधर-उधर होने वाली संधियों में शामिल हो जायें? मैं चाहता हूं कि सभा इस पर सभी आदर्शवाद को भूलते हुए न्यूनतम अवसरवादी और व्यावहारिक दृष्टि से देखे, यद्यपि आदर्शवाद भी आवश्यक है और इस समय अन्य समयों की अपेक्षा भी, उस की अधिक आवश्यकता है। क्या हम इस पागलखाने में घुस कर अन्य पागलों की भांति काम करें? किसी के पास हाइड्रोजन बम है इस का मतलब यह नहीं कि उस का मस्तिष्क भी हाइड्रोजन बम जितना शक्तिशाली है। आज दुर्भाग्य यह है कि अणु जैसी महान् शक्ति हमें मिल गई है यह मानवता की प्रगति और प्रकृति की विशाल शक्ति, आदि के ऊपर उस के नियंत्रण का प्रतिनिधित्व करती है। पर यह बड़ा सन्देहास्पद विषय है कि मानव-मस्तिष्क ने उस के नियंत्रण में कितनी प्रगति की है। इस पर विचार करते हुए इसी निष्कर्ष पर पहुंचना पड़ता है कि अणु शक्ति का मुकाबिला अणु शक्ति से नहीं किया जा सकता अर्थात् अन्य शब्दों में हिंसा की शक्ति का अन्त हिंसा की शक्ति नहीं कर सकती। इस समय हम ऐसी स्थिति पर पहुंच गये हैं जब शक्ति इतनी अधिक तेज है कि वह प्रयोक्ता और जिस के ऊपर उस का प्रयोग किया गया है, दोनों को ही पदाक्रान्त करेगी और जब तक हमारे पास इस का नियंत्रण और निरोध करने का कुछ और तरीका न हो, हम अवश्यमेव अभिभूत हो जायेंगे।

[श्री जवाहरलाल नेहरू]

अन्य उपाय क्या हैं ? लोग दस्तावेजों पर हस्ताक्षर कर रहे हैं कि अणु अस्त्रों पर रोक लगा दी जाये, उन का उत्पादन नहो । मैं ने भी कभी कभी इस के बारे में बात की है । पर जितना मैं इस पर विचार करता हूं उतना ही क़ायल हो जाता हूं कि अब इस या उस बात पर रोक लगाने की बात करना व्यर्थ है । अब इस का कोई मूल्य नहीं या थोड़ा-सा ही मूल्य है । शीघ्र ही एक ऐसा समय आने वाला है, जब हाइड्रोजन बम एक छोटे से देश द्वारा भी बड़ी सुविधा से बनाया जा सकेगा--कुछ अतिशयोक्ति-पूर्वक ध्वनि में एक वैज्ञानिक ने मुझे बताया कि यह गृहोद्यान तक में बन सकेगा । यह अतिशयोक्ति हो सकती है, पर इस से पता चल जाता है कि क्या होने जा रहा है । जब सर्वत्र हाइड्रोजन बम बनने लगेंगे, तो दुनिया का क्या होगा । हम दुनिया की इस विभीषिका का सामना किस प्रकार करेंगे--यदि आप सर्वथा विभिन्न स्तर पर --उन्हें आप नैतिक, आध्यात्मिक या चाहे कुछ कहें--मैं उस शब्द को संकीर्ण अर्थ में प्रयुक्त नहीं कर रहा हूं--आप उसे सभ्य तरीका कह सकते हैं । आखिर मानवता सभ्यता के ऐसे स्थल पर पहुंच चुकी है, जिस ने इसे व्यवहार में संयम दिखा दिया है । हम वह संयम भूल रहे हैं । गत दो महा-युद्धों ने मानवता को नृशंस बना दिया । हम भाग्य के चौराहे पर खड़े हैं कि अब मानवता नृशंस पशु बनेगी या सभ्यता की ओर बढ़ेगी । यह सभ्यता और संस्कृति की बात है । यह मूल्यांकन के उस स्तर की बात है, जो हम अपनाना चाहते हैं । और मैं समझता हूं कि गान्धी जी ने हमें जो सिखाया था उस का पहले से भी अधिक आज महत्व है । मैं देशों के लिये गान्धी का सन्देश अपनाने के सिवा और कोई चारा नहीं ढूंढ पाता । शक्ति या युद्ध इस का इलाज नहीं हैं, बल्कि युद्ध आज एक अन्तिम बुराई है और हिंसा नैतिक मूल्यों के अलावा भी निरर्थक है और उस से कुछ लाभ नहीं होता । सभा को तथा-कथित पंचशील--पांच सिद्धान्तों-- का ज्ञान है । कुछ लोगों ने उन की आलोचना की । कुछ लोगों ने बताया--एक देश के प्रधान मंत्री ने कहा--कि यह सब कम्युनिस्ट चाल है । वस्तुस्थिति यह है कि यह सिद्धान्त जिन्हें हम पंचशील कहते हैं, संसार को एक चुनौती है और हम संसार के प्रत्येक देश से पूछना चाहते हैं कि वह उन सिद्धान्तों के सम्बन्ध में क्या सोचते हैं । सभी देश कहें कि हम उस से सहमत हैं । मैं यह नहीं कहता हूं कि प्रत्येक देश को इसे स्वीकार करना चाहिये पर इस के अतिरिक्त शान्ति का अन्य कोई उपाय नहीं है । अतः प्रत्येक देश को साहस के साथ इसे स्वीकार करना चाहिये ।

आखिर ये सिद्धान्त क्या हैं ?--वे इस प्रकार हैं :--प्रत्येक देश के प्रभुत्व तथा प्रादेशिक स्वातंत्र्य को मान्यता देना, किसी देश पर आक्रमण न करना, किसी देश के घरेलू मामलों में हस्तक्षेप न करना, पारस्परिक सम्मान, समता, आदि । क्या कोई देश इस से असहमत होगा ? यदि वह दूसरों पर आक्रमण के पक्ष में है तो हों; इसी प्रकार यदि वे दूसरे देशों के घरेलू मामलों में हस्तक्षेप करना चाहते हैं तो करें काफी हस्तक्षेप हो भी रहा है, मैं जानता हूं पर कोई इसे स्वीकार नहीं करता और मैं ज़ोरदार शब्दों में कहता हूं कि पंचशील दुनिया के सारे देशों को एशिया की ओर से एक चुनौती है । प्रत्येक देश को इस प्रश्न का स्पष्ट उत्तर देना पड़ेगा और मैं आशा करता हूं कि इस एशिया-अफ्रीका सम्मेलन में यह प्रश्न पूर्णतः स्पष्ट और सीधे तरीके

से रखा जायेगा । प्रत्येक देश को अपने हृदय को टटोल कर उत्तर देना चाहिये कि क्या वह किसी पर आक्रमण न करने और हस्तक्षेप न करने की नीति से सहमत है ।

कभी कभी आरोप लगाया जाता है कि कम्युनिस्ट दूसरे देशों के मामलों में हस्तक्षेप करते हैं, यह ठीक है । स्पष्ट है कि वह देश भी दूसरे देशों के मामलों में हस्तक्षेप करते हैं जो कम्युनिस्ट नहीं हैं । हम इसे कैसे रोक सकते हैं । आज के सैनिक साधनों द्वारा हम दूसरे दल को कुचल डालने के लिये अधिक शक्तिशाली बनते हैं । इस प्रकार के कार्य द्वारा अपने को कुचलते और संसार को कुचलते हैं । समस्या का हल ढूंढने के लिये यह कोई समझदारी का उपाय नहीं है ।

पंचशील में कहा गया है कि सभी लोगों को बाह्य और आन्तरिक दोनों प्रकार के हस्तक्षेपों से अलग रहना चाहिये । हो सकता है कि इन सिद्धान्तों से सहमत होने वाला एक देश अपने वचनों का पालन करे ; ऐसा होने की गुंजाइश सदैव रहेगी चाहे आप सन्धि करें, समझौता करें या वचनबद्ध हों । पर फिर भी, समझौते के लिये यह एक दृढ़ आधार है । यदि कोई देश जो इसे स्वीकार करता है और अपने शब्दों का पालन नहीं करता तो स्वभावतः उसे कठिनाइयां उठानी पड़ेंगी । अतः यह पंचशील या सह-अस्तित्व का सिद्धान्त आप को स्वीकार करना पड़ेगा । चाहे आप सह-अस्तित्व स्वीकार करें या संघर्ष तथा पारस्परिक विनाश । यही उस का विकल्प है ।

एशिया-अफ्रीका सम्मेलन सह-अस्तित्व का एक ज्वलंत उदाहरण है । इस में विभिन्न दृष्टिकोणों और विविध साधनों पर विश्वास करने वाले देश सम्मिलित होंगे । उन में से कुछ देशों ने सैनिक संधियां कर ली हैं । पर फिर भी वह लोग इस सम्मेलन में सम्मिलित होंगे और सह-अस्तित्व के मामले पर चर्चा करेंगे ।

फिर, साम्यवाद तथा साम्यवाद के विरोध के बारे में भी काफी चर्चा होती है । दोनों महत्वपूर्ण हैं--मैं इसे स्वीकार करता हूं । पर अफ्रीका महाद्वीप में होने वाली अनुचित बातों के सम्बन्ध में आप क्या कहते हैं ? नये औपनिवेशिक क्षेत्रों में घटने वाली बातों के सम्बन्ध में क्या हो रहा है ? दक्षिण अफ्रीका में घटित होने वाली मानवीय दुःखद घटना के बारे में क्या हो रहा है ? सैकड़ों और हजारों लोगों को उन के घरों से निकाल कर दूसरे स्थानों पर ले जाया जा रहा है । स्वतंत्रता के सेनानी इस सम्बन्ध में कुछ बात क्यों नहीं करते ? वे इस सम्बन्ध में मौन हैं और इन बातों पर ध्यान नहीं देते । पर उन्हें विदित होना चाहिये कि एशिया और अफ्रीका के लोग, वह इस सम्बन्ध में अधिक शोर भले ही न मचावें, इन बातों की गम्भीरता पर अवश्य विचार करते हैं । और कभी कभी वह इस बात को साम्यवाद और साम्यवाद-विरोधी बातों से भी अधिक गम्भीर मानते हैं । जातीयवाद की यह समस्या समस्त मानव की समस्या है और यह बहुत खतरनाक सिद्ध हो सकती है । जातीयवाद या जातीय पृथकत्व की यह समस्या संसार की भीषणतम समस्या बन सकती है । मैं चाहता हूं कि यूरोप, अमरीका, एशिया और अफ्रीका के देश इस बात को महसूस करें और यह न सोचें कि औपनिवेशिक क्षेत्र और जातीय क्षेत्र में जो कुछ हो रहा है हम उसे यों ही सहन करते रहेंगे । यह सब बातें हमें चोट पहुंचाती हैं । केवल इसी कारण कि इसे रोकने के लिये हम कोई प्रभावोत्पादक कार्यवाही नहीं कर सकते और केवल शोर मचा कर हम अपना महत्व खोना नहीं चाहते, हम शान्त रहते हैं । पर इन बातों में हमारे हृदय और मस्तिष्क

[श्री जवाहरलाल नेहरू]

पर काफ़ी प्रभाव डाला है और हम इन्हें बहुत महसूस करते हैं। कुछ अधिक महत्व-पूर्ण बातों के सम्बन्ध में विचार करते हुए भी हम देखते हैं कि हमारे दृष्टिकोण इस सम्बन्ध में भिन्न हैं कि कौन सी बात अधिक महत्वपूर्ण है और कौन सी कम महत्वपूर्ण है।

इन में से कुछ मामलों के सम्बन्ध में मैं ने संक्षेप में संकेत किया है; अब मैं कई वर्तमान समस्याओं के बारे में कुछ कहना चाहता हूं, जैसे गोआ और श्रीलंका की समस्यायें। श्रीलंका के सम्बन्ध में मैं इन तर्कों की नहीं लाना चाहता क्योंकि पाकिस्तान और श्रीलंका दोनों हमारे पड़ोसी देश हैं और मैं समझता हूं कि ऐसी कोई बात कहना जिस से उन्हें कष्ट पहुंचे, या जिस से समस्या के हल में अधिक कठिनाइयां उत्पन्न हों, अच्छी बात नहीं है।

एक दिन, एक प्रसंग में, कुछ माननीय सदस्यों ने पूर्वी पाकिस्तान में होने वाली घटनाओं के सम्बन्ध में पाकिस्तान के विरुद्ध सैनिक कार्यवाही करने की भी ओछी बातें कहीं थीं। इन माननीय सदस्यों के सम्बन्ध में मैं केवल इतना कह सकता हूं कि उन में बुद्धि या सामान्य ज्ञान का अभाव है। मेरा उद्देश्य उन की आलोचना करना नहीं है।

जहां तक श्रीलंका का प्रश्न है, हम वहां सदा सहयोग देते रहे और हम ने धैर्य भी रखा। हम ने श्रीलंका के निवासियों और वहां की सरकार की कठिनाइयों को समझने और उन्हें दूर करने का सामर्थ्य से अधिक प्रयत्न किया है। पर हमें निराशा है कि जो हमारा लक्ष्य है वह पूरा नहीं हो पा रहा। उदाहरण के लिये कुछ आंकड़े लीजिये। मैं आप को भारतीय उद्भव के उन व्यक्तियों के पंजीयन के आंकड़े देता हूं जो श्रीलंका के नागरिक बन गये हैं। यह एक मुख्य समस्या है, अन्यथा, ये लोग किसी भी राज्य के नागरिक नहीं रहेंगे। वे भारत के नागरिक नहीं हैं जब तक कि एक अन्य प्रक्रिया के द्वारा उन्हें भारतीय राष्ट्र जन के रूप में पंजीकृत नहीं किया जाता। वे लोग न यहां के हैं न वहां के; वे वहां इसलिये रह रहे हैं कि आखिर उन्हें बाहर निकाल कर कहां भेज दिया जाये। हम इस बात से सहमत थे कि हम उन लोगों को अपने नागरिकों के रूप में पंजीकृत कर लेंगे जो इस बात के इच्छुक होंगे और जो हमारे संविधान में उपबन्धित नियमों की पूरा करेंगे। हम ने श्रीलंका सरकार पर भी ज़ोर डाला कि वह भी अपने पंजीयन कार्य को आगे बढ़ावे ताकि वहां के इन भारतीय उद्भव के लोगों का मामला धीरे धीरे निबट जाये। हमें आशा थी कि बहुत से लोग अपने को श्रीलंका के नागरिक के रूप में पंजीकृत करवा लेंगे क्योंकि, वस्तुतः, वे श्रीलंका के निवासी हैं। उन के पिता वहीं पैदा हुए थे और वहीं रहे। दिसम्बर १९५३ से सितम्बर, १९५४ तक, कुल नौ महीनों में श्रीलंका में पंजीकृत व्यक्तियों की संख्या ७,५०५ थी। ४५,२३६ व्यक्तियों के आवेदन-पत्र अस्वीकृत कर दिये गये थे। इन ९ महीनों में अस्वीकृति की तुलना में पंजीयन का अनुपात बहुत थोड़ा यानी ४५ हजार पर ७,५०० था। अब अक्तूबर १९५४ से जनवरी तक के चार महीनों को लीजिये। पंजीकृत व्यक्तियों की कुल संख्या २१ थी और ३६,२६० व्यक्तियों के आवेदन-पत्र अस्वीकृत किये गये। स्पष्ट है कि पहले कुछ थोड़े से लोगों को पंजीकृत किया जाता था और अधिकांश लोगों के आवेदन पत्र अस्वीकृत कर दिये जाते थे पर अब ऐसी स्थिति आ गई है कि किसी का आवेदन-पत्र स्वीकार नहीं किया जाता। चार महीनों में ३६ हजार अस्वीकृतियां

और २१ व्यक्तियों का पंजीयन, अर्थात् सवा ५ व्यक्तियों का प्रति मास पंजीयन ।

जहां तक हमारे यहां भारतीय नागरिकों के पंजीयन का सम्बन्ध है हमारी प्रगति सामान्य रही है । मैं आंकड़े बता दूंगा । जनवरी से दिसम्बर १९५४ तक उम्मीदवारों की संख्या ८,००० थी और उस में से ५,६०० पंजीकृत हुए । सच तो यह है कि कोई भी आवेदनपत्र अस्वीकृत नहीं किया गया । शेष की अभी छानबीन हो रही है । इस प्रकार हजारों आवेदन पत्र स्वीकृत हो चुके हैं । हम काफी तेजी से यह काम कर रहे हैं ।

भारत और श्रीलंका के प्रधान मंत्रियों की अन्तिम भेंट में यह निश्चित किया गया था कि श्रीलंका सरकार श्रीलंका में ऐसे व्यक्तियों की एक सूची तैयार करे जो भारतीय उद्भव के हैं ताकि यह जाना जा सके कि वे कौन व्यक्ति हैं, क्योंकि श्रीलंका सरकार को सदैव वह शिकायत रही है कि अवैध आप्रवासी आते रहते हैं । हमें पता लगाना चाहिये कि वे कौन लोग हैं । चूंकि प्रायः ऐसा हुआ है कि काफी समय से वहां निवास करने वाले व्यक्ति को भी अवैध निवासी बताया गया है । अभी वह सूची भी तैयार नहीं हो पाई है । मैं सभा को बता भी चुका हूं और मैं पुनः सभा से अपील करता हूं कि इस मामले में और पाकिस्तान के मामले में भी हमारा प्रयत्न मित्रता का और सहयोगपूर्ण रहेगा और हम अपने सिद्धान्तों की छोड़ेंगे नहीं ।

मैं ने गोआ की बात कही । माननीय सदस्यों ने देखा है कि कुछ सत्याग्रही २६ जनवरी को वहां गये थे, जिन्हों ने हिंसा या इस प्रकार का अन्य कोई अपराध नहीं किया ; सिवाय इस के कि वे वहां गये जोकि एक प्राविधिक अपराध है । यदि उन्हें दण्ड दिया जाय तो मैं इस की कोई शिकायत नहीं करूंगा ; यदि कोई व्यक्ति सत्याग्रह करता है और उसे दण्ड मिलता है तो उसे या उस की ओर से अन्य किसी को कोई शिकायत नहीं होनी चाहिये । यह तो सत्याग्रह का अपरिहार्य परिणाम है; अन्यथा वह सत्याग्रह नहीं कहा जा सकता । यदि उन्हें दण्ड दिया गया होता तो उन्हें कोई आपत्ति न होती पर जब इन व्यक्तियों को या इन में कुछ को २८ वर्षों का कठोर कारावास दिया गया है तो मेरा हृदय कांप उठता है उन में से कुछ को विविध अवधि का कारावास दिया गया और कुछ को २८ वर्षों का कारावास दिया गया है और उन्हें पुर्तगाल नहीं बल्कि उन उपनिवेशों में भेज दिया गया जहां पुर्तगाल के कैदी भेजे जाते हैं । मैं इसे जंगलीपन ही कहूंगा । वास्तव में यह आश्चर्य की बात है कि कोई भी सरकार इस प्रकार का व्यवहार करे और विशेष रूप से वह सरकार जो हमारी सद्भावना और धैर्य के कारण भारत के कोने में स्थित है । मैं पुर्तगाल सरकार को चेतावनी देना चाहता हूं कि वह यह समझ ले कि वह यहां पर हमारे धैर्य और सद्भावना के कारण ही है । ऐसी बात नहीं कि हम परिस्थिति का सामना नहीं कर सकते बल्कि हम आगे की बात सोच कर शान्त रहते हैं ; हम जानते हैं कि आज संसार की स्थिति क्या है और हम इसी कारण हिंसा आदि का कोई छोटा-सा भी ऐसा काम नहीं करना चाहते, जिस की बाद में भयानक प्रतिक्रिया हो । हम थोड़े समय के लिये और प्रतीक्षा कर सकते हैं क्योंकि इस का अन्त अनिवार्यतः वही होगा जो हमारा लक्ष्य है । हमारा उद्देश्य पूर्ण होगा । इस की कल्पना भी नहीं की जा सकती और यह असम्भव है, और मुझे इस की कोई चिन्ता नहीं कि संसार की कौन-कौन सी शक्तियां पुर्तगाल का समर्थन करेंगी, कि पुर्तगाल के लोग गोआ में रहें ।

[श्री जवाहरलाल नेहरू]

मैं ने अन्य शक्तियों की ओर संकेत किया । अभी हाल में इस सम्बन्ध में अधिक बात नहीं हुई है । पर कुछ समय पूर्व कुछ देशों ने नाटो संधि के आधार पर गोआ के बारे में हम से बातें की थीं । उस के बाद नाटो संधि की विस्तृत शर्तें हमारे सामने आईं । उत्तर अतलान्तिक सन्धि संगठन का निर्माण उत्तर अतलान्तिक देशों के रक्षात्मक प्रयोजनों के लिये किया गया था । उत्तर अतलान्तिक सन्धि संगठन की एक शर्त तो महाद्वीपों और महासागरों को पार कर एशिया और भारत तक भी लागू हो गई । वह भारत के एक औपनिवेशिक क्षेत्र की रक्षा करने के लिये भारत में लागू की गई । यह काम नाटो के सम्मान के लिये उचित नहीं था । इस से पता लगता है कि उस के प्रशंसनीय उद्देश्यों में से कुछ उद्देश्य खराब भी हैं जिन्हें बुरे कामों के लिये भी प्रयोग में लाया जा सकता है ।

मैं ने क्यूमाय और मात्सू की ओर भी संकेत किया है । और एक दो देशों को छोड़ कर सभी देश स्वीकार करते हैं कि क्यूमाय और मात्सू द्वीप चीन देश के ही अंग हैं । गोआ एक द्वीप नहीं है ; गोआ भारत देश में है ; यह क्यूमाय और मात्सू की भांति समुद्र द्वारा पृथक् भी नहीं होता । फिर भी इस मामले में यह तर्क पेश किये जाते हैं और इस प्रकार का अशिष्ट व्यवहार भी किया जाता है ।

पाकिस्तान के सम्बन्ध में सभा को विदित है कि पाकिस्तान के प्रधान मंत्री इस महीने की २८ तारीख को यहां आने वाले थे । बाद में हम लोगों ने विभिन्न कारणों ---कार्य की अधिकता आदि--- से इस भेंट को स्थगित कर दिया और इस एशिया-अफ्रीका सम्मेलन के बाद नई दिल्ली में १४ मई को हम फिर मिलेंगे । मैं निश्चित रूप से जानता हूं कि पाकिस्तान के नेता और विशेष रूप से पाकिस्तान के गवर्नर जनरल भारत-पाकिस्तान मामलों को तय करने के लिये बहुत आतुर हैं । मैं चाहता हूं और मुझे विश्वास है कि यह सभा भी इस बात के लिये आतुर होगी कि इन मामलों को मैत्रीपूर्ण ढंग से तय करने में कोई हस्तक्षेप न किया जाय । पाकिस्तान और भारत की जनता में एक दूसरे के प्रति काफी सद्-भावना है, ऐसा मैं समझता हूं । अभी हाल में हमें इस का एक सजीव प्रमाण मिला है, कि बड़े बड़े नेता चाहे जो कहें या करें, जनता में एक दूसरे के प्रति यह मूल सद्भावना है । हमारे देश के लोग पाकिस्तान गये थे और वहां के लोग यहां आये । ये दोनों बातें बड़ी सहायक और उचित हुईं ; पर यह सत्य है कि इतना समय होने के बाद भी जिन समस्याओं को हमें सुलझाना है वह सरल नहीं हो पाई हैं । पाकिस्तान का जन्म होने के बाद इन सात या आठ वर्षों में सभी प्रकार की बातें हुईं । और इस इतिहास को मिटाना बहुत कठिन है । हम उन की बातों पर विचार करेंगे । पर, हमें उन पर यथार्थ-वादी रूप में विचार करना पड़ेगा इस बात की अवहेलना न करते हुए कि क्या घटनायें हो चुकी हैं । उन बड़ी समस्याओं में निष्क्रान्त सम्पत्ति और नहरी पानी की समस्यायें भी हैं । जहां तक नहरी पानी का सम्बन्ध है, हम इस सम्बन्ध में गत दो वर्षों से विश्व बैंक से बातचीत कर रहे हैं । अब हम एक विशेष अवस्था पर पहुंच गये हैं । यह प्रगति बड़ी धीमी रही है । पर हम ने कुछ प्रगति की है । कल या आज विश्व बैंक के प्रति-निधियों, पाकिस्तान के इंजीनियरों, का एक शिष्टमंडल आया है और उन के साथ हमारे इंजीनियर भी होंगे । यह शिष्टमंडल भारत में सिंधु के कछार के विभिन्न स्थानों

और पाकिस्तान में सिंधु के कछार के विभिन्न स्थानों को देखेंगे और विश्व बैंक की उन सिफारिशों के आधार पर, जिन्हें हम ने और पाकिस्तान ने स्वीकार कर लिया है, योजनायें बनायेंगे । कुछ भी हो हम उस ओर बढ़ रहे हैं, यद्यपि हमारी गति बहुत धीमी है । निष्क्रान्त सम्पत्ति के सम्बन्ध में अधिक आन्दोलन नहीं हुआ । मेरे सहयोगी पुनर्वास मंत्री पुनः इन मामलों की चर्चा करने के लिये उन के निमंत्रण पर चार पांच रोज में ही पाकिस्तान जाने वाले हैं ।

एक पेचीदा प्रश्न काश्मीर का है । निस्सन्देह भारत एवं पाकिस्तान के बीच के प्रश्नों में से यह सब से टेढ़ा प्रश्न है । हमें यह स्मरण रखना चाहिये कि काश्मीर कोई ऐसी वस्तु नहीं है जिसे भारत तथा पाकिस्तान मिल कर लूट सकते हैं । उस की अपनी आत्मा है और उस का अपना व्यक्तित्व भी है—भारत के लिये, निस्सन्देह पाकिस्तान के लिये भी यह कोई ऐसी वस्तु नहीं है जिस पर कि दोनों देश अपने राजनैतिक दावपेच चला सकें । काश्मीर की जनता की सद्भावना के बिना कुछ नहीं हो सकता है । मैं इस के विस्तार में नहीं जाना चाहता हूं ।

सभा को, यदि वह अभी नहीं जानती है तो, यह सुन कर प्रसन्नता होगी कि हाल के कुछ महीनों में काश्मीर में उल्लेखनीय प्रगति हुई है । आर्थिक दृष्टि अथवा अन्य दृष्टि से भी कदाचित् ही काश्मीर पहिले इतना समृद्ध रहा हो । निःसन्देह आज यह पहिले कई वर्षों की अपेक्षा अधिक समृद्ध है । उस की खाद्य, एवं कई योजनायें जोकि हाथ में लीं गई थीं, सफलता के सन्निकट हैं । वहां का सिन्धु घाटी जल-विद्युत कारखाना, काश्मीर की समग्र उपत्यका में न केवल प्रकाश के हेतु अपितु अन्य प्रयोजनों के लिये भी विशेष रूप से उपयोगी सिद्ध होगा । मोहरा का ४०-५० वर्ष पूर्व निर्मित कारखाना गिरने को है । अब हम बानिहाल सुरंग की विशाल परियोजना प्रारम्भ कर रहे हैं । यह विशाल कार्य प्रारम्भ हो चुका है । वास्तव में कई छोटी छोटी परियोजनायें जम्मू एवं काश्मीर राज्य में नवीन वातावरण उत्पन्न कर रही ह । इसलिये राजनैतिक तथा आर्थिक दृष्टि से वहां की स्थिति कई वर्ष पूर्व की स्थिति की अपेक्षा अच्छी हो गई है । मेरे कहने का यह अभिप्राय नहीं है कि सभी चीजें पूर्णतः सन्तोषजनक हैं ; हां, यह ज़रूर है कि वे प्रगति के पथ पर अवश्य हैं ।

उस दिन सभा के दो सदस्यों ने मेरे पास प्रश्न भेजे थे । मैं उन प्रश्नों का उपयुक्त समय पर उत्तर दूंगा । प्रश्न काश्मीर के प्रधान मंत्री द्वारा विधान-सभा में दिये गये वक्तव्य के सम्बन्ध में था । मुझ से पूछा गया था कि क्या शेख अब्दुल्ला ने इस वक्तव्य के सम्बन्ध में मुझ से पत्र-व्यवहार किया था । वक्तव्य इस प्रकार का था कि काश्मीर के प्रधान मंत्री बख्शी गुलाम मुहम्मद के पास इस प्रकार के पत्र इत्यादि हैं जिन से १½ वर्ष पूर्व हुई बातों पर प्रकाश पड़ता है, किन्तु वह मेरे तथा भारत सरकार के बीच में पड़ने के कारण उसे प्रकाशित नहीं कर सके । मुझे उन के यद्यपि शब्द याद नहीं हैं किन्तु उन्होंने कुछ इसी प्रकार की बातें कही थीं । इस पर मुझे शेख अब्दुल्ला का इस आशय का एक तार प्राप्त हुआ कि उन्होंने यह वक्तव्य देखा है तथा वह उक्त पत्रों एवं मसौदों को प्रकाशित करवाना चाहते हैं तथा उन्हें आशा है कि भारत सरकार बीच में नहीं पड़ेगी ।

यह सब बातें, निःसन्देह एक, डेढ़ अथवा दो ढाई वर्ष पूर्व हुई बातों से सम्बन्ध रखती हैं । मैं सीधे यह बात कहूंगा कि जहां तक भारत सरकार और मेरा सम्बन्ध है मैं इस मामले में जम्मू और काश्मीर की सरकार

[श्री जवाहरलाल नेहरू]

के बीच नहीं पड़ना चाहता हूं। मैं ने पुरानी बातें स्मरण करने का प्रयत्न किया। मैं यह भी बता दूं कि पत्रों में प्रकाशित बख्शी गुलाम मुहम्मद के भाषण का संवाद सही नहीं है। बीच के कतिपय वाक्य छूट गये हैं। सामान्य रूप से वह इस प्रकार का था। मैं जम्मू तथा काश्मीर सरकार के स्वविवेक के बीच नहीं पड़ना चाहता। उन्हें ही स्वयं इस का निर्णय करना है। मेरे पास ये पत्र नहीं हैं। मैं नहीं जानता कि वे क्या हैं। यद्यपि मेरे पास कुछ पत्र हैं मेरे पास शेख अब्दुल्ला के साथ किया गया पत्र व्यवहार भी है, कुछ पत्र श्री रफी अहमद किदवई के पास थे। श्री ए० पी० जैन तथा श्री मौलाना आजाद के पास भी कुछ पत्र हैं। पत्र-व्यवहार के अलावा कई वार्तायें भी हुई थीं। उन वार्ताओं को प्रस्तुत करना कठिन है। पत्र-व्यवहार इन्हीं वार्ताओं से सम्बन्धित है और वे वार्तायें उपलब्ध नहीं हैं। १९५२ के तत्काल उपरान्त १९५३ के पूरे वर्ष हुई घटनाओं का चित्र खींचना बहुत कठिन है।

इस प्रश्न के एक अन्य पहलू से मैं तथा सभा दोनों ही सम्बन्धित हैं। मैं आशा करता हूं कि हम सभी समस्याओं को मैत्रीपूर्ण ढंग से सुलझाना चाहते हैं तथा शत्रुता बढ़ाना नहीं चाहते। सभा इस बात पर स्वयं विचार करे कि डेढ़ या दो वर्ष पूर्व हुई वार्ताओं की रिपोर्टों, उन दिनों के आरोपों एवं प्रत्यारोपों के प्रकाशन से कहां तक मैत्रीपूर्ण निपटारे का वातावरण प्रस्तुत होगा या कहां तक उस से मैत्रीपूर्ण वातावरण में बाधायें प्रस्तुत होंगी। इसलिये मैं ने इसे जम्मू एवं काश्मीर की सरकार के ऊपर छोड़ दिया है। मेरे पास सभी पत्र नहीं हैं। मैं ने बता दिया है कि मैं बीच में नहीं पड़ना चाहता हूं। यदि कुछ कागजात हों तो वे उन पर विचार करें तथा उन्हें प्रकाशित करें।

एक बात मैं कहना चाहूंगा। माननीय सदस्यों को स्मरण होगा कि १० अगस्त, १९५३ को मैं ने यहां एक वक्तव्य दिया था यह शेख अब्दुल्ला की गिरफ्तारी के एक दो दिन बाद की बात है। एक महीने पश्चात् कदाचित् १७ सितम्बर को मैं ने एक अधिक विस्तृत वक्तव्य दिया। मैं १७ सितम्बर का वक्तव्य पढ़ रहा था उस में बहुत कुछ था। यदि मैं इस मामले को पुनः लेना चाहूंगा तो मैं इसे फिर से दोहराऊंगा। जो सदस्य इस मामले में रुचि रखते हैं उन से मैं इस वक्तव्य का निर्देश करूंगा क्योंकि मैं ने उस परिस्थिति का कुछ विस्तार से विवेचन किया था। स्वाभाविक रूप से तब भी मैं ने कोई ऐसी बात न कहने का प्रयत्न किया जिस से परिस्थिति बिगड़ जाती। एक मामले के सम्बन्ध में अब भी आरोप लगाये जाते हैं।

शेख अब्दुल्ला की गिरफ्तारी के उपरान्त काश्मीर की घाटी में हुई भयावह घटनाओं, १५०० व्यक्तियों की सामूहिक हत्या, इत्यादि के सम्बन्ध में हाल ही में काश्मीर की विधान-सभा में पुनः आरोप लगाये गये थे। उस समय भी मैं ने उन की पूरी जांच करने का दायित्व अपने ऊपर लिया था। यह जांच काश्मीर की सरकार के द्वारा नहीं प्रत्युत हमारे, सूचना विभाग के तथा अन्य व्यक्तियों द्वारा स्वतंत्रतापूर्वक होनी थी। मुझे इस में कोई सन्देह नहीं है कि हमारी जांच से, भले ही वह जांच शत प्रतिशत सही न हो, फिर भी लगभग ९८ प्रतिशत सही अवश्य थी, उस से काश्मीर सरकार द्वारा प्रकाशित आंकड़ों की पुष्टि हुई। हमारे तथा उन के आंकड़ों में केवल चार-पांच का अन्तर था मैं ने यह बात उन व्यक्तियों को बताई जोकि यह आरोप लगा रहे थे कि डेढ़ हजार व्यक्तियों को मारा एवं क़त्ल किया गया। यह प्रत्यक

स्थान तथा गांव का विस्तृत प्रतिवेदन था जिस में वास्तव में नाम इत्यादि सभी चीजें दी गई थीं। मैं ने कहा यह प्रतिवेदन है। इस पर उन्हों ने कुछ नहीं कहा। एक वर्ष पश्चात् उन्हों ने फिर वही प्रश्न उठाया। मेरे विचार से इस प्रकार आरोप लगाते रहना नितान्त अनुचित है। उन्हें यह जानना चाहिये कि उन के आरोप बिल्कुल मिथ्या हैं।

कुछ दिनों में विदेशों के कई प्रसिद्ध व्यक्ति हमारे यहां आने वाले हैं। उन में मिश्र के प्रधान मंत्री, अफगानिस्तान के उपप्रधान एवं विदेश मंत्री होंगे। उन के बाद सूडान के प्रधान मंत्री आयेंगे। उस से भी पहले—अगले सप्ताह अथवा दस एक दिन में यदि हाल की घटनाओं के कारण उन के दौरे में बाधा न हुई तो, दक्षिणी वियतनाम सरकार का एक प्रतिनिधि मंडल, तथा वियतनाम के विदेश मंत्री आने वाले हैं। कुछ समयोपरान्त उत्तरी वियतनाम का प्रतिनिधि मंडल तथा वहां के विदेश मंत्री इत्यादि आने वाले हैं ये सभी आठ या दस दिन के अन्दर आने वाले हैं। सभा जानती है कि कम्बोडिया के राजकुमार, वहां के प्रधान मंत्री तथा अन्य व्यक्ति यहां आये। इन सभी बातों से हमारे ऊपर अतिरिक्त भार एवं दायित्व पड़ता है, तथा हम इस दायित्व को सभा की सद्भावना एवं सौहार्द से ही निभा सकते हैं।

श्री एच० एन० मुकर्जी (कलकत्ता—उत्तर-पूर्व) : प्रधान मंत्री ने जो कुछ भी कहा हम उस की प्रशंसा करते हैं, पर कुछ अन्य अपकारक बातों को भी हमें छोड़ना पड़ेगा।

[पंडित ठाकुर दास भार्गव पीठासीन हुए]

मुझे प्रसन्नता है कि हम बांडुंग सम्मेलन के अवसर पर मिल रहे हैं। हमारे प्रधान मंत्री ने बताया है कि बांडुंग सम्मेलन में हम पंचशील के सिद्धान्तों को संसार के सम्मुख उपस्थित करेंगे और यही पंचशील एक ऐसी शक्ति को जन्म दे सकता है जिस के सहारे मानवता को शान्ति की प्रत्याभूति दी जा सकती है। पंचशील के सम्बन्ध में विचार करते समय हमें उस धारणा को त्यागना पड़ेगा जिस ने हमें १९४८ से १९५३ के बीच हमारी वैदेशिक नीति के सम्बन्ध में बड़ी हानि पहुंचाई है।

आज दुनिया में केवल एक ही युद्ध-वादी गुट है। एक और भी गुट है जो शान्ति गुट है। इस में सोवियत रूस और चीन का गणराज्य सम्मिलित हैं और ये राज्य दूसरे देशों के साथ अपने सम्बन्ध में पंचशील के सिद्धान्तों को मानते हैं और पंचशील को मानने को तैयार हैं। पर आंग्ल-अमरीकी गुट पंचशील के सिद्धान्तों को नहीं मानता और इसी कारण आज संसार की ऐसी स्थिति है।

इस बांडुंग सम्मेलन में हमें अमरीकी सरकार और पश्चिमी यूरोपीय प्रजातंत्रात्मक देशों की परीक्षा करनी है। यह काम विशेष रूप से भारत को करना है, क्योंकि भारत ही इस में अगुआ रहा है।

एशिया के सम्बन्ध में पंचशील के सिद्धान्तों को लागू करने से कोई विशेष लाभ नहीं। हमें इन सिद्धान्तों को एशिया में संयुक्त राज्य की स्थिति पर लागू करना चाहिये। इस के लागू करने से फारमोसा जलउभह मध्य से सातवें जहाजी बेड़े को हटाना होगा रयूक्यू द्वीप को खाली करवाना होगा तथा सैनिक अड्डों को तोड़ना होगा। इस सम्बन्ध में हम क्या करने जा रहे हैं? यह एक महत्वपूर्ण कार्य है। मैं प्रधान मंत्री की बात मानता हूं कि इस के लिये नैतिक बल की आवश्यकता है। यह नैतिक बल कैसे पैदा किया जाय और कैसे उस का उपयोग